1. निदेशात्मक परामर्श
(DIRECTIVE COUNSELLING)

निदेशात्मक उपबोधन में परामर्शदाता का महत्त्व अधिक होता है। वह उपबोध्य की समस्याओं के ाधान के लिये उपाय बताता है एवं निर्देश (Direction) देता है। इस प्रकार के परामर्श में परामर्शदाता स्या पर अधिक ध्यान देता है। निदेशीय परामर्श में साक्षात्कार एवं प्रश्नावली पद्धति का प्रयोग किया ता है।

विली (Willey) तथा **एण्ड्रयू** (Andrew) के अनुसार निम्नलिखित अभिग्रह (Assumptions) देशीय परामर्श के औचित्य को स्थिर करते हैं–

1. अपने प्रशिक्षण, अनुभव तथा ज्ञान के आधार पर परामर्शदाता समस्या के समाधान के लिये अच्छी सलाह कर सकता है।
2. परामर्श एक बौद्धिक प्रक्रिया (Process) है।
3. अपने पूर्वाग्रहों तथा सूचनाओं के अभाव के कारण उपबोध्य समस्या का समाधान नहीं खोज पाता है।
4. समस्या के समाधान की अवस्था के माध्यम से ही परामर्श का प्रयोजन उपलब्ध होता है।

निदेशात्मक परामर्श में परामर्शदाता उपबोध्य की समस्या के समाधान में विशेष दिलचस्पी लेता है। वह विभिन्न प्रविधियों तथा उपकरणों (Techniques and tools) के माध्यम से आँकड़े संगृहीत करता है तथा उनका विश्लेषण करके छात्र की समस्या के कारणों की खोज करता है। कारणों का निदान कर लेने पर वह समस्या के समाधान के लिये निदेशात्मक परामर्श प्रदान करता है। इस प्रकार निदेशात्मक परामर्श को समस्या-केन्द्रित परामर्श भी कहा जा सकता है।

निदेशात्मक परामर्श में निम्न बिन्दु महत्त्वपूर्ण है–

1. परामर्शदाता द्वारा अधिकांश उत्तरदायित्व वहन किया जाता है। उसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका का प्रदर्शन उसके निर्देशों, क्रियाओं, सम्बन्धों तथा निर्णयों में होता है।

2. परीक्षण अंक, आलेख, व्यक्ति इतिहास और विविध प्रतिवेदन की इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

3. निदान इस परामर्श का प्रमुख पद है। इसमें समस्या के सम्भावित कारण निश्चित किये जाते हैं, उपबोध्य के वर्तमान स्तर को ध्यान में रखते हुये इन कारणों का महत्त्व निश्चित किया जाता है तथा भविष्य की कार्य प्रणाली के बारे में निर्णय लिये जाते हैं।

4. विश्लेषण करना परामर्शदाता का कार्य है क्योंकि उपबोध्य अपनी समस्या के समाधान के लिये परामर्शदाता पर निर्भर रहता है।

5. उद्देश्यपूर्ण प्रश्नों की सहायता से उपबोध्य परामर्शदाता के चिन्तन को जाग्रत करता है। इसमें समस्या तथा उसके समाधान को अधिक महत्त्व दिया जाता है।

6. अधिकांश निर्णय परामर्शदाता द्वारा उपबोध्य की सहायता से लिये जाते हैं।

निदेशात्मक परामर्श के सोपान (Steps in Directive Counselling)

विलियमसन ने निदेशात्मक परामर्श के निम्नलिखित 6 सोपानों की चर्चा की है–

1. विश्लेषण (Analysis)—निदेशात्मक परामर्श का प्रथम सोपान सहायता चाहने वाले छात्र की पहचान करना परामर्शदाता का प्रथम कार्य है। यह पहचान परामर्शदाता या तो व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा या उपबोध्य से सम्बन्धित तथ्यों के अभिलेख से कर सकता है। कभी-कभी शिक्षक भी छात्र की पहचान में सहायता कर सकते हैं। यह कार्य छात्र से सम्बन्धित समस्त तथ्य एकत्रित करके उनके विश्लेषण के द्वारा करना चाहिये।

2. संश्लेषण (Synthesis)—छात्र से सम्बन्धित तथ्यों का संक्षिप्तीकरण तथा उनको संगठित करके उपबोध्य की क्षमताओं, समायोजन या कुसमायोजन का आकलन करना।

3. निदान (Diagnosis)—निदेशात्मक परामर्श का तीसरा सोपान उपबोध्य की समस्या के कारणों का निदान करना है। समस्या का समाधान उसके कारणों के जाने बिना सम्भव नहीं है।

4. फलानुमान (Prognosis)—इस सोपान में परामर्शदाता यह अनुमान लगाने का प्रयास करता है कि समस्या के इसी प्रकार बढ़ने पर उसके क्या परिणाम हो सकते हैं।

5. परामर्शदाता (Counselling)—अब परामर्शदाता और उपबोध्य आमने-सामने बैठते हैं और दोनों मिलकर समस्या समाधान के प्रयास प्रारम्भ करते हैं।

निदेशात्मक परामर्श में प्रयुक्त प्रविधियाँ (Techniques used in Directive Counselling)

निदेशात्मक परामर्श में प्राय: पाँच प्रविधियों का प्रयोग होता है–

1. अनुकूलता का दबाव (Forcing conformity)—परामर्शदाता उपबोध्य के साथ सम्पर्क स्थापित करके उसको आत्मानुभूति उपलब्ध करने में सहायता करता है। यदि उपबोध्य स्वयं को समझने में असफल रहता है तो अन्य प्रविधियों के स्थान पर अनुकूलता पर बल देता है और अनुकूलता पर बल देने के लिये वह सलाह प्रविधि प्रयोग में ला सकता है।

2. राजी करने की विधि (Persuasive method)—संगत प्रमाण एकत्रित करने के लिये परामर्शदाता मनाने या राजी करने की विधि उपयोग में ला सकता है और कार्य की रूपरेखा बनाकर उपबोध्य को उस कार्य को करने के लिये राजी कर सकता है।

3. उचित विकल्प का चयन (Selecting the appropriate choice)—परामर्शदाता को चाहिये कि वह उपबोध्य को समस्याओं के समाधान के निर्णय या विकल्प का उचित चयन करने का अवसर प्रदान करे।

4. आवश्यक कौशल सीखना (Learning the needed skills)—इस प्रक्रिया में सबसे बड़ी बाधा सूचनायें एकत्रित करने के कौशलों की अज्ञानता है। जब आवश्यक सूचनायें उपलब्ध करवायी जायें तो उपबोध्य को सूचनायें एकत्रित करने के कौशल को सीखने का प्रयास करना चाहिये।

5. परिवर्तित अभिवृत्ति (Changing attitude)—उपबोध्य को परामर्श के प्रति अपने रुख में परिवर्तन विवेक युक्त और तार्किक ढंग से करना चाहिये।

निदेशात्मक परामर्श के गुण (Merits of Directive Counselling)

1. यह विधि व्यक्ति के बौद्धिक पक्ष पर अधिक बल देती है।
2. सहायता के लिये आने पर उपबोध्य को आवश्यक सहायता प्रदान की जाती है।
3. इसमें कम समय में अनेक क्रियायें सम्पन्न हो सकती हैं।
4. इस परामर्श में उपबोध्य की अपेक्षा उसकी समस्या पर अधिक ध्यान दिया जाता है।
5. इस प्रक्रिया में उपबोध्य की सहायता की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है।

निदेशात्मक परामर्श के दोष (Demerits of Directive Counselling)

1. इसमें परामर्शदाता का प्रभुत्व होता है।
2. उपबोध्य में अपनी समस्या के समाधान की क्षमता का विकास नहीं होता है, वह सदैव इसके लिये दूसरों पर निर्भर रहता है।
3. इसमें उपबोध्य की मौलिकता का विनाश हो जाता है।
4. यह परामर्श अमनोवैज्ञानिक और प्रभावहीन होता है।

2. अनिदेशात्मक परामर्श (NON-DIRECTIVE COUNSELLING)

निदेशात्मक परामर्श के विपरीत अनिदेशात्मक परामर्श उपबोध्य केन्द्रित होता है। इस प्रकार के परामर्श में उपबोध्य को बिना किसी प्रत्यक्ष निर्देश के **आत्मोपलब्धि** (Self-realisation) एवं **आत्मसिद्धि** (Self-actualization) तथा **आत्मनिर्भरता** की ओर उन्मुख किया जाता है।

अनिदेशीय परामर्श का मुख्य एवं जोरदार व्याख्याता कार्ल रोजर्स को माना जाता है। उन्होंने परामर्श के इस प्रारूप का उपयोग शैक्षिक, व्यावसायिक तथा वैवाहिक आदि अनेक समस्याओं के समाधान के लिये किया है। **रोजर्स** ने अनिदेशीय परामर्श की तीन विशेषतायें बतायी हैं—

1. उपबोध्य-केन्द्रित सम्बन्ध (The client-centred relation)—रोजर्स ने अनिदेशात्मक परामर्श में उपबोध्य एवं परामर्शदाता के सम्बन्धों को स्पष्ट करते हुये कहा है कि ऐसे परामर्श में परामर्शदाता उपबोध्य की **वैयक्तिक स्वायत्तता** (Personal autonomy) को सम्मान प्रदान करता है। परामर्शदाता उपबोध्य के लिये किसी निर्णय विशेष को नहीं सुझाता अर्थात् अन्तिम निर्णय उपबोध्य को ही करना होता है। परामर्शदाता ऐसा वातावरण उत्पन्न करता है जिसमें उपबोध्य अपनी समस्या का समाधान स्वयं खोज लेता है।

2. भावना तथा आवेग को महत्त्व (Emphasis on feelings and emotions)—अनिदेश परामर्श में उपबोध्य को अपनी भावनाओं को स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त करने का अवसर प्रदान किया है और इससे उसकी भावनाओं एवं अभिरुचियों का सही ज्ञान प्राप्त होता है और इस प्रकार समस्या वास्तविक हल प्राप्त करने में सुविधा होती है। इसमें महत्त्व भावों की अभिव्यक्ति को दिया जाता है बौद्धिक प्रक्रिया को गौण माना जाता है।

3. उचित वातावरण (Permissive atmosphere)—उपबोध्य केन्द्रित होने के कारण अनिदे परामर्श में उपबोध्य को भावों तथा अभिरुचियों को व्यक्त करने की स्वतन्त्रता होती है। यह तकनी है, जबकि परामर्शदाता इस प्रकार का वातावरण उत्पन्न करने में सहयोग दे जिसमें प्रार्थी अपने का उपयोग निर्णय लेने के लिये कर सके तथा वह अपने को अच्छी तरह जान सके। इसमें परामर्श तटस्थतापूर्वक उपबोध्य की बातों पर गौर करता है, वह कोई निर्णायक नहीं होता।

अनिदेशात्मक परामर्श के सम्बन्ध में स्नाइडर के विचार

अनिदेशात्मक परामर्श के स्वरूप को स्पष्ट करने में विलियम स्नाइडर के निम्नलिखित वि बड़े उपयोगी हैं जो उन्होंने एक लेख में व्यक्त किये हैं। उन्होंने अनिदेशीय परामर्श के चार प्रमुख अधि (Assumptions) स्वीकार किये हैं–

1. जीवन लक्ष्य में स्वतन्त्रता–उपबोध्य अपने जीवन के प्रयोजन को निर्धारित करने में स्वत है, चाहे परामर्शदाता की राय कुछ भी हो।

2. अधिकतम सन्तोष–अधिकतम सन्तोष की प्राप्ति के लिये उपबोध्य उद्देश्य का वरण स करेगा।

3. स्वतन्त्र निर्णय की क्षमता–परामर्श की प्रक्रिया के द्वारा वह थोड़े समय के बाद स्वतन्त्र से निर्णय लेने की क्षमता विकसित कर लेगा।

4. समायोजन समस्या–भावात्मक संघर्ष (Emotional conflicts) वास्तविक समायोजन प्रमुख बाधा है।

अनिदेशात्मक परामर्श के प्रमुख सिद्धान्त (Main Principles of Non-directive Counselling)

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर अनिदेशात्मक परामर्श के आधारभूत सिद्धान्तों का उल्लेख निम्न प्रकार किया जा सकता है–

1. उपबोध्य की सत्यनिष्ठा का आदर (Respect for the integrity of the client)–अनिदेशात्मक परामर्श में उपबोध्य की सत्यनिष्ठा एवं उसकी वैयक्तिक स्वायत्तता (Personal autonomy) को पर्याप्त आदर प्रदान किया जाता है। परामर्शदाता बिना कोई निर्णय या निर्देशन दिये उपबोध्य की सहायता के लिये तत्पर रहता है। अन्तिम निर्णय उपबोध्य को ही लेना होता है। यह कहा जा सकता है कि अनिदेशीय परामर्श उपबोध्य की समायोजन एवं अनुकूलन क्षमता को स्वीकार करता है। उपबोध्य का इस क्षमता में विश्वास अनिदेशात्मक परामर्श का आधारभूत सिद्धान्त स्वीकार किया गया है।

2. उपबोध्य के समग्र व्यक्तित्व का ध्यान (Concerned with the total personality of the client)—अनिदेशीय परामर्श का दूसरा प्रमुख सिद्धान्त यह है कि उपबोध्य के समग्र व्यक्तित्व को

अपनी दृष्टि में रखता है इसलिये इस प्रकार के परामर्श का लक्ष्य किसी उपस्थित अथवा विशेष समस्या का समाधान प्रस्तुत करना न होकर व्यक्ति की समायोजन एवं अनुकूलन क्षमता का विकास है।

3. उपबोध्य के विचारों की भिन्नता के प्रति सहिष्णुता एवं स्वीकृति का सिद्धान्त (Principle of tolerance and acceptance of difference of opinion with client)—अनिदेशात्मक परामर्श के दौरान यह बिल्कुल स्वाभाविक है कि उपबोध्य परामर्शदाता के विचारों से भिन्न विचार रखता हो। इसलिये वैचारिक भिन्नता के प्रति सहिष्णु होना अनिदेशात्मक परामर्श का प्रमुख एवं महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है। परामर्शदाता को तटस्थ रहकर उपबोध्य में यह विश्वास उत्पन्न करना चाहिये कि वह उसकी बात को ध्यानपूर्वक सुन रहा है और मान रहा है।

4. उपबोध्य को स्वयं को तथा अपनी शक्ति को समझने में समर्थ बनाना (Enabling the client develop awareness of himself and his potentialities)—अनिदेशात्मक परामर्श का लक्ष्य उपबोध्य की अपनी शक्तियों को समझने एवं अपनी सम्भावनाओं को यथास्थिति जानने में सहयोग देना होता है। परामर्श की अवस्थाओं (Counselling situations) का निर्माण इस प्रकार किया जाना चाहिये जिससे परामर्शदाता की निर्णय लेने की एवं अनुकूलन (Adaptation) की शक्ति का विकास हो।

अनिदेशात्मक परामर्श की विशेषतायें (Characteristics of Non-directive Counselling)

रोजर्स के अनुसार अनिदेशात्मक परामर्श की तीन विशेषतायें मुख्य हैं–

1. परामर्श-प्रार्थी केन्द्रित सम्बन्ध (The client-centered relation)—अनिर्देशीय परामर्श में महत्त्व व्यक्ति को दिया जाता है न कि समस्या को तथा प्रार्थी को कुछ समस्यायें होती हैं जिनका वह समाधान कराना चाहता है। अनिर्देशीय परामर्शदाता ऐसा वातावरण पैदा कर देता है कि प्रार्थी उसी वातावरण में अपनी समस्या का समाधान स्वयं तलाश कर लेता है और अपने आपको दूसरों पर निर्भर नहीं समझता। उसमें हीन भावना पैदा नहीं होती है, क्योंकि उसे इस बात का बोध नहीं होता है कि कोई अन्य व्यक्ति उसके लिये कुछ विचार या उसकी कुछ सहायता कर रहा है।

2. भावना एवं आवेग पर बल (Emphasis on feeling emotion)—अनिर्देशीय परामर्श का सम्बन्ध आवेगों से होता है तथा अनेक प्रतिचार (Responses) प्रायः प्रार्थी की भावनाओं को प्रदर्शित कर देते हैं। अतः महत्त्व आवेगात्मक प्रक्रिया पर दिया जाता है, न कि बौद्धिक प्रक्रिया को वास्तविकता का बोध कराया जाता है। उसे अपनी भावनाओं को स्वतंत्रतापूर्वक व्यक्त करने के अवसर प्रदान किये जाते हैं। इससे उसकी भावनाओं तथा अभिरुचि का सच्चा ज्ञान प्राप्त हो जाता है और इस प्रकार समस्या का समाधान सरल, सुगम तथा सही होता है।

3. उचित वातावरण (The permissive atmosphere)—एक अनिर्देशीय परामर्शदाता राय देने वाला, नीतिशास्त्री या कोई निर्णायक नहीं होता है। उसका काम तो उचित वातावरण पर निर्माण करना होता है। प्रार्थी को अधिक-से-अधिक तथा कम-से-कम जैसा वह चाहे, बोलने का अवसर प्रदान किया जाता है। प्रार्थी अपनी भावनाओं को चाहे जिस प्रकार व्यक्त कर सकता है तथा परामर्शदाता तटस्थतापूर्वक सुनता है। वह एक ऐसा वातावरण पैदा कर देता है कि प्रार्थी अपने निर्णय स्वयं ले लेता है, निर्णय लेने का काम या दायित्व वह परामर्शदाता पर नहीं डालता। इस प्रकार परामर्शप्रार्थी अपने आपको अच्छी प्रकार समझ सकने के योग्य हो जाता है।

अनिदेशात्मक परामर्श के सोपान (Steps of Non-directive Counselling)

रोजर्स ने अनिदेशात्मक परामर्श के निम्नलिखित सोपान बताये हैं–

1. व्यक्ति किसी समस्या के साथ परामर्शदाता के सम्मुख स्वयं उपस्थित होता है।

2. परामर्शदाता उपबोध्य को निःसंकोच रूप से अपनी भावनायें प्रकट करने के लिये अनुकूल, मधुर और विश्वसनीय वातावरण की रचना करता है।

3. परामर्शदाता उपबोध्य द्वारा व्यक्त नकारात्मक और सकारात्मक भावों को व्यवस्थित एवं संगठित करके स्पष्ट करने का प्रयास करता है।

4. भावनाओं की स्वतंत्र अभिव्यक्ति के बाद उपबोध्य में अन्तर्दृष्टि का विकास होता है, परामर्शदाता उसकी भावनाओं को और स्पष्ट करता है।

5. उपबोध्य अब अपने को निर्णय लेने और उन पर कार्य करने के योग्य या सक्षम समझने लगता है।

6. ऐसी स्थिति में उपबोध्य और अधिक सहायता की आवश्यकता अनुभव न करने के कारण परामर्श परिस्थितियों का परित्याग कर देता है।

निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श में अन्तर (Differences between Directive and Non-directive Counselling)

निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श में अन्तर विभिन्न परामर्शदाताओं द्वारा स्वीकृत सिद्धान्तों एवं प्रयुक्त प्रविधियों (Techniques) पर आधारित है। वस्तुतः दोनों में कोई लक्ष्यगत भिन्नता नहीं है। कहा जाता है कि निदेशात्मक एवं अनिदेशात्मक परामर्श एक ही लक्ष्य को प्राप्त करने के अलग-अलग साधन हैं। फिर भी साधनगत अन्तरों को समझ लेना वांछनीय है। दोनों में प्रमुख अन्तर निम्नलिखित हैं–

1. समस्या हल करने की क्षमता–अनिदेशीय परामर्श में यह स्वीकार किया जाता है कि व्यक्तियों में अपनी समस्याओं के हल के लिये शक्ति एवं क्षमता मौजूद होती है, उसे केवल इस शक्ति एवं क्षमता के अहसास अथवा पहचान करने की आवश्यकता होती है। निदेशीय परामर्श इसे स्वीकार नहीं करता। निदेशात्मक परामर्श का यह अभिग्रह है कि व्यक्ति की क्षमता की सीमायें होती हैं। उसके लिये अपनी समस्याओं का पूर्वाग्रहमुक्त अध्ययन सम्भव नहीं हो पाता।

2. भावात्मक दृष्टिकोण–दूसरा अन्तर यह है कि अनिदेशात्मक परामर्श में उपबोध्य के भावात्मक दृष्टिकोण (Emotional attitudes) को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझा जाता है और भावात्मक तनावों की अभिव्यक्ति का प्रयत्न किया जाता है, जबकि निदेशीय परामर्श में समस्या के बौद्धिक पहलू को अधिक महत्त्व दिया जाता है। समस्या के समाधान का प्रयत्न निदेशीय परामर्श के द्वारा किया जाता है।

3. व्यक्ति केन्द्रित होना–अनिदेशीय परामर्श व्यक्ति केन्द्रित है तथा निदेशीय परामर्श समस्या केन्द्रित (Problem-centred)।

4. संश्लेषण को महत्त्व–अनिदेशात्मक परामर्श में संश्लेषण को अधिक महत्त्व दिया जाता है तथा निदेशात्मक परामर्श में विश्लेषण को।

5. अधिक समय लगना–अनिदेशीय परामर्श में अपेक्षाकृत अधिक समय लगता है।

6. जीवन इतिहास का अध्ययन–अनिदेशीय परामर्श उपबोध्य के जीवन इतिहास का अध्ययन नहीं करता है, जबकि निदेशात्मक परामर्श में व्यक्ति के गत जीवन का अध्ययन अनिवार्य समझा जाता है।

निदेशात्मक और अनिदेशात्मक परामर्श में अन्तर

निदेशात्मक परामर्श	अनिदेशात्मक परामर्श
1. उपबोधक केन्द्रित होता है।	1. उपबोध्य केन्द्रित होता है।
2. उपबोधक अधिक क्रियाशील होता है।	2. उपबोध्य अधिक क्रियाशील होता है।
3. बौद्धिक पक्ष पर अधिक बल दिया जाता है।	3. भावात्मक पक्ष को अधिक प्रधानता दी जाती है।
4. वातावरण नियंत्रित होता है।	4. वातावरण स्वतंत्र होता है।
5. भूतकालीन अध्ययन को प्रधानता।	5. तत्कालीन समस्याओं को प्रमुखता।
6. समय कम लगता है।	6. समय अधिक लगता है।
7. समस्या के समाधान में उपबोधक सहायता करता है।	7. समस्या समाधान में उपबोधक सहायता नहीं करता है।
8. उपबोध्य की अन्तर्दृष्टि के विकास पर ध्यान नहीं दिया जाता है।	8. अन्तर्दृष्टि के विकास पर बल दिया जाता है।
9. साक्षात्कार में उपबोधक नेतृत्व करता है।	9. उपबोध्य साक्षात्कार का नेतृत्व करता है।
10. निर्णय उपबोधक द्वारा लिया जाता है।	10. निर्णय उपबोध्य द्वारा लिया जाता है।